बरनवालों का संक्षिप्त इतिहास

बरन वालों का इतिहास प्रमाणिक रूप से महाराजा अहिबरन और शहर बरन से संबंधित है। ऐतिहासिक ग्रंथों के आधार पर यह तो तय है कि समस्त बरन वाल शहर बरन से निकले हैं। यह भी स्थापित तथ्य है कि शहर बरन की स्थापना महाराजा अहिबरन ने की थी। लेकिन इसके आगे बढ़ना इतना आसान नहीं होता है। कारण ये है कि महासभा के गठन के बाद शुरू के कुछ दशकों को छोड़ दें तो कोई भी शोध कार्य इस विषय पर नहीं किया गया है। जाति रत्न त्रिवेणी प्रसाद बरनवाल, श्री जगदीश बरनवाल "कुंद", स्व० श्री कृष्णचन्द्र बरनवाल, स्व० भोलानाथ गुप्ता बरनवाल इत्यादि ने इस विषय पर काफी कुछ लिखा है लेकिन उन्होंने भी इस विषय में और अधिक शोध की आवश्यकता बतलाई है।

2. इतिहास की संक्षिप्त जानकारी की दृष्टि से मैं बरन वालों के इतिहास को तीन हिस्सों में बांटता हूं।

- **बरन वालों का प्राचीन इतिहास (997 ईस्वी तक):** जिसके बारे में फिलहाल बहुत ज्यादा तथ्य मौजूद नहीं हैं।

- **मध्यकालीन इतिहास (997 ईस्वी से लेकर 1881 ईस्वी तक):** यह एक अंधकार युग है, जिसमें बरन वालों की सबसे ज्यादा क्षति भी हुई और बरन वालों की अलग पहचान भी स्थापित हुई। लेकिन इसके विषय में भी दो चार घटनाओं को छोड़ कर ज्यादा जानकारी उपलब्ध नहीं है।

- **1881 ईस्वी से लेकर अभी तक का आधुनिक इतिहास:** इसे भी समझने की दृष्टि से दो तीन हिस्सों में बांटा जा सकता है।

3. **प्राचीन इतिहास:** शहर बरन (बुलंद शहर) के जिलाधीश रहे श्री F S ग्राउज ने महाराजा अहिबरन के होने पर भी संशय किया है। लेकिन महाराजा अहिबरन का अस्तित्व इतिहास के उद्धरणों में भरा हुआ है। बुलंद शहर जिला कार्यालय द्वारा नुमाइश हॉल में लगाई गई शिला पट में इस बात का जिक्र है कि शहर बरन की स्थापना (महा) राजा अहिबरन ने की थी। महाराजा अहिबरन के विषय में भी कई मान्यताएं और परंपराएं प्रचलित हैं। हम उनके बारे में एक एक करके चर्चा करते हैं।

3.1 पं० ज्वाला प्रसाद शास्त्री कृत "जाति भास्कर" के अनुसार समाधि के दो पुत्रों गुणाधीश और मोहन में से गुणाधीश के दो पुत्र हुए धर्मदत्त और शुभंकर। शुभंकर ने अपनी जाति से अलग होकर पेरी नगरी में अपना निवास किया। पीछे ये कांचनपुर में आकर शंखनिधि वैश्य का मंत्री हुआ। शंखनिधी की पुत्री चंद्रावती से इसका विवाह हुआ जिसे लेकर ये कावेरी नदी को पार कर के अपने स्थान पर आया जहां शिव के आशीर्वाद से इसे तेंदूमल नामक पुत्र हुआ जिसका पुत्र वाराक्ष और जिसके वंश में बरनवाल नामका बड़ा बुद्धिमान पुत्र हुआ। इस वंश में पुरुषों द्वारा 36 कुल प्रतिष्ठित हुए। शास्त्री जी की ही दूसरी परम्परा के अनुसार द्वाराक्ष नामक राजा की राजधानी बरन थी। यहां जो उसकी संतानें हुईं सो बरनवाल कहलाईं।

3.2 राजा लक्ष्मण सिंह अपने लेख में लिखते हैं कि महाभारत युद्ध के दो, तीन पीढ़ियों के बाद अहार के सरदार का सादर मुकाम अहार से उठ कर बनछती जिसे जंगल काट कर बनाया गया था में स्थापित हुआ। फिर कुछ समय पश्चात परमाल तंवर (तोमर) ने उसी स्थान पर एक नया कस्बा बसाया। बाद में राजा अहिबरन ने इसे बढ़ा कर शहर के समान किया जो बरन के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

3.3 सूचना विभाग उ प्र से प्रकाशित पुस्तिका "प्रगति के बढ़ते चरण: बुलंदशहर" में भी इस बात का उल्लेख है कि इस शहर का इतिहास ग्राम आहार से प्रारंभ होता है जो हस्तिनापुर के उजड़ने के पश्चात पांडवों की राजधानी रहा था। आहार का अर्थ शायद सांपों के मारे जाने से था। संभवतः यहीं जन्मेजय ने नागवंश को खत्म करने के लिए नाग यज्ञ किया था। जन्मेजय ने वन छटी को साफ कर के नगरी बसाई। राजा परमाल ने यहां एक किला बनवाया और फिर राजा अहिबरन ने यहां बरन नामका नगर बसाया।

3.4 1871 ईस्वी में प्रकाशित भारतेंदु हरिश्चंद्र की पुस्तक "अग्रवालों की उत्पत्ति में" अग्रवालों की वंश परंपरा के लिए मुख्य आधार श्री महालक्ष्मी व्रत कथा को बनाया गया था। इसकी एक परंपरा में समाधी के दो पुत्रों में प्रथम पुत्र गुणाधीश से बरन और द्वितीय पुत्र मोहन से अग्रसेन की उत्पत्ति दिखाई गई है। श्री महालक्ष्मी व्रत कथा के बारे में श्री सत्यकेतु विद्यालंकार का कहना था कि इसे हस्तलिखित रूप में भारतेंदु जी के पुस्तकालय में पाकर उन्होंने ही प्रकाशित करवाया था। डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त का कहना है कि भविष्य पुराण के किसी भी अंक में इस कथा का उल्लेख नहीं है। महालक्ष्मी व्रत कथा की प्रमाणिकता को भी श्री गुप्त अस्वीकार करते हैं।। श्री कृष्णचंद्र बरनवाल और श्री मक्खनलाल बरनवाल ने महाराजा अग्रसेन से बरनवाल परंपरा का प्रादुर्भाव दिखाया है लेकिन वंशावली के संबंध में कोई भी स्त्रोत के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है। दूसरी बात कि इन सज्जनों द्वारा प्रस्तुत वंशावली और श्री महालक्ष्मी व्रत कथा में दी गई वंशावली में कोई मेल नहीं है।

3.5 बुलंदशहर गजेटियर में यह संभावना व्यक्त की गई है कि संभवतः आहार और बरन दोनो नगरों में शासन करने के कारण संबंधित शासक ने अहिबरन की उपाधि धारण की थी।

3.6. कुल मिलाकर यह तो तय है कि महाराजा अहिबरन शहर बरन के संस्थापक और बरन वालों के आदिपुरुष थे, लेकिन उनके पूर्व के बारे में मतांतर है। राहुल सांकृत्यायन ने बरनवालों को यौधेय गण की संतान बताया है। यौधेय गण आज के पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली इत्यादि इलाकों में फैला एक शक्तिशाली गण था जिसकी चर्चा इतिहास की किताबों में मिलती है। इतिहास यह प्रमाणिक रूप से बताता है कि इस इलाके में तकरीबन 4थी शताब्दी तक यौधेयों का शासन था। इसलिए राहुल सांकृत्यायन का यह कहना कि बरनवाल यौधेयों की संतान हैं, गलत नहीं है। डॉ० रामवृक्ष सिंह के अनुसार यौधेय युद्ध प्रिय गण जाति थी. पाणिनि ने यौधेयों के लिए आयुधजीवी संघ का प्रयोग किया है, जिनके लिए वीरता परम धर्म था. यौधेयों का साम्राज्य एक समय में आधुनिक भरतपुर तक फैला हुआ था. इसलिए यह कहना अनुचित नहीं होगा कि बरन वाल जो यौधेयों के संतान कहे जाते हैं, का इतिहास वीरता पूर्ण रहा है. इसे जब हम बरन वालों की कुलदेवी माता चामुंडा के परिपेक्ष्य में देखते हैं तो बात ज्यादा साफ़ होती है. एक आयुधजीवी जाति की कुलदेवी माता चामुंडा ही हो सकती हैं.

4. मध्यकालीन इतिहास: महाराजा अहिबरन के वंशज बरन में एक के बाद एक राज करते रहे और 997 ईस्वी में बरन के राजा रुद्रपाल के समय तक यह शासन अनवरत चलता रहा, जब अलीगढ़ के राजा हरदत्त डोर ने दिल्ली के राजा की सह से बरन पर आक्रमण कर दिया और रुद्रपाल की हत्या कर के खुद गद्दी पर बैठ गया। अलीगढ़ छोड़ कर बरन को अपना प्रधान स्थल बना लेने की घटना से भी यह अंदाज लगाया जा सकता है कि बरन एक समृद्ध राज्य हुआ करता था। लेकिन फिर महमूद गजनवी के आक्रमण शुरू हुए। अल बरूनी के लेखन से हमें पता चलता है कि महमूद गजनवी के 12वें हमले में बरन पर हमला किया गया था। राजा हरदत्त डोर ने अपने दस हजार लोगों के साथ किले से बाहर निकल कर इस्लाम अपना कर अपनी और बरन की भी रक्षा की थी। कुछ सन्दर्भों के अनुसार महमुद गजनवी ने हरदत्त डोर की हत्या कर दी थी और बरन में भारी लूट पाट की थी. 1191 ईस्वी में पृथ्वीराज चौहान ने मुहम्मद गोरी से बरन की रक्षा की थी. लेकिन 1192 ईस्वी में पृथ्वीराज चौहान की पराजय के बाद मुहम्मद गोरी के सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक ने बरन पर हमला किया और बरन के राजा चन्द्रसेन डोर की हत्या कर दी तथा शहर की बागडोर गोरी के मित्र काजी

नूरुद्दीन ग़जनीवाल को सौंप दी. लेकिन बरन वालों पर असली परीक्षा की घड़ी आई जब मुहम्मद तुगलक ने 14वीं शताब्दी में इसपर हमला किया। इस समय बरन वालों पर इस्लाम अपनाने, वरना मरने या फिर शहर छोड़ देने के अलावा कोई चारा नहीं बच गया था। संघर्ष में बरन वालों के 100 प्रधान पुरुषों के सर काट कर किले से लटका दिए गए थे। इससे आतंकित होकर बरनवालों ने अपनी जन्मभूमि का त्याग करने का निर्णय कर लिया। कई बरन वाले मुस्लिम भी बन गए जिन्हें आजकल बरनी मुस्लिम के नाम से जाना जाता है और बरन में उन्हें आप बहुतायत में पाएंगे। विद्वानों का मत है कि शहर में हुए अत्याचार से ये लोग इतने आतंकित थे कि उन्होंने गांवों को ज्यादा सुरक्षित समझा और इसलिए गांवों को अपना ठिकाना बनाया। शायद काली (कालिंदी) नदी जिसे पहले वरणावती नदी के नाम से जानते थे, के रास्ते ये लोग शहर छोड़ कर निकले थे और इस कारण काली नदी और फिर गंगा के किनारे बसते गए। इसके बाद सन 1881 ईस्वी तक के बारे में हमें कोई विशेष जानकारी नहीं है। 16वीं शताब्दी के अंतिम समय में बादशाह अकबर ने परगना बरन की कानूनगोई बरनवालों को दी थी और लाला संतोषराय इस वंश के प्रथम कानूनगोय हुए थे. 250 सालों तक यह पद इसी वंश के पास रहा. औरंगजेब के समय में इसी वंश के काले राय मुसलमान होकर अजमत उल्ला हुए जिन्हें इनाम के तौर पर नवाब की पदवी और 84 गांव की जागीर दी गयी. इनकी हिन्दू संतानें फतहचन्द और गोपीनाथ और पोते हकीकत राय हिन्दू ही रहे और लज्जित होकर कहीं चले गए. काले राय की मुसलमान संतान मुहम्मद हयात और मुहम्मद रोशन के वंश की भारी वृद्धि हुई. 1876 में बरनवाल मुसलमान मु० शहाबुद्दीन, नवाब, माशूक अली खान और बाद में नवाब आशिक हुसैन खान आनरेरी मजिस्ट्रेट, शेख अंसारी इत्यादि का जिक्र मिलता है. 1798 में शहर बरन से मालागढ़ तक एक मरहटा सरदार माधवराव फालकिया का अधिकार हुआ. किन्तु 1804 में कर्नल जेम्स स्किनर ने उसे हरा कर उसके 28 गांव जब्त करके उससे किला बरन और मालागढ़ खाली करवा लिए और कुछ वजीफा देकर उसके लड़के रामाराव फालकिया को उसके 600 सवार साथियों के साथ कंपनी की सेना में शामिल कर लिया था. कहा जाता है कि अनूप शहर की स्थापना करने वाले राजा अनूप राय जिन्होंने जहांगीर को शेर से बचाया था महाराजा अहिबरन के वंशज ही थे. बरनवाल शीतल दास ने 1830 ईस्वी में शहर बरन का एक मोहल्ला शीतलगंज बसाया था. बरनवाल वकील बाबू रामनारायण ने सन 1857 के पहले स्वतंत्रता संग्राम में 1000 सैनिकों के साथ अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाई लड़ी थी। बिसौली के किले में स्वयं पेशवा नाना साहेब ने इन्हें खान बहादुर/ कर्नल की उपाधि दी थी। इन्होनें पहली दो लड़ाईयों में अंग्रेज़ों को कड़ी शिकस्त दी परन्तु इस्लामनगर की तीसरी लड़ाई में सात जून सन 1858 को अंग्रेजों से लोहा लेते समय ये वीरगति को प्राप्त हुए।

5. आधुनिक इतिहासः 14वीं शताब्दी में जब मुहम्मद तुगलक के आतंक और जबरन धर्म परिवर्तन के कारण बरन वालों को अपना नगर त्यागना पड़ा तो वो पूर्व की तरफ कूच कर गए। चूंकि मुसलमान आक्रमणकारियों का मुख्य आक्रमण शहरों पर होता था इसलिए उन्होंने गांवों को आसरा बनाना ज्यादा मुफीद समझा। धीरे धीरे एक जगह से दूसरे जगह बरनवाल फैलते गए। उस समय यातायात और डाक के साधन आज की भांति नहीं थे। इसलिए उनमें आपस में संबंध भी धीरे धीरे टूटते गए। कालांतर में नाम में भी फर्क पड़ने लगा। बरनवाल, बनवार, बंदरवाल, बंदरवार, बरैया, बरवार, वर्णवाल, बर्नवाल, मोदी, गर्ग, गोयल, बंसल, पांडे, सिंह, सिन्हा इत्यादि नाम प्रचलन में आ गए। कहने का मतलब है की विभिन्न स्थानों के बरन वालों में नाम और संपर्क दोनो में अंतर आ गया। फिर ब्रिटिश शासन का आविर्भाव हुआ और सड़क, रेल इत्यादि के साधन सामने आए, डाक की व्यवस्था बनी। अंग्रेजों द्वारा भारतीयों को असभ्य करार दिए जाने के कारण भारतीय राष्ट्रीयता के प्रति नया आक आकर्षण पैदा हुआ और भारतीय विभूतियों ने देश के स्वर्णिम इतिहास की तरफ सबका ध्यानाकर्षण किया। साथ ही अंग्रेजों की जाति आधारित व्यवस्था जिसमें हरेक भारतीय को